शोधपत्र-हिंदी

March, 2010

कबीर के साहित्य की प्रासंगिकता

* प्रा. डॉ. एन. जी. येमेकर** प्रा. विरभद्र बिरादार

*हिंदी विभागाध्यक्ष, श्री हावगीस्वामी महाविद्यालय, उदगीर, लातूर
** हिंदी विभाग, श्री हावगीस्वामी महाविद्यालय, उदगीर, लातूर

साहित्य समाज की जीवनदायिनी शक्ति हैं । वह समाज की धरोहर हैं। संत साहित्य समाज के लिए एक संजीवनी बूटी की तरह हैं। जैसे संजीवनी बूटी व्यक्ति को पुनर्जीवित करती है वैसे संत साहित्य समाज को जीवदान देकर उसके मूल्यों की रक्षा करता हैं। जिस देश के साहित्य के आदर्श उँचे होते हैं उस देश की अस्मिता स्वंय आदर्शमय हो जाती हैं ।

साहित्य का विकास समाज के अंतर्गत ही होता हैं। समाज से हटकर साहित्य की कल्पना करना असंभव है। भारतीय भूमि संतों, मनिषियों, विचारकों, दार्शनिकों, पंडितों की भूमी हैं। किसी भी राष्ट्र के उन्नायक उस राष्ट्र के संत ही रहे हैं । वे सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, नैतिक जीवन के पक्षधर होते हैं ।

किसी भी साहित्य की प्रासंगिकता इस पर निर्भर रहती है कि वह साहित्य आनेवाली अनेक पिढियों के लिए मार्गदर्शन कर सकें, वह उस पिढी का पथदशर्नन करने मे सक्षम हों । साथही यह भी देख जाता है कि वह साहित्य समाज के विकास में सहयोग दें । वह साहित्य समाज के आम आदमी से जुडा हुआ हों ।

युगों–युगों तक समाज तथा आम आदमी से जुडा हुआ साहित्य ही कालजयी तथा प्रासंगिक होता हैं । हिंदी साहित्य में महात्मा कबीर का साहित्य ऐसा ही साहित्य है जो आज के वर्तमान समय में भी उतना ही आधुनिक तथा प्रासंगिक है जितना युगीन समय में था ।

इस दृष्टि से कबीर के साहित्य का मूल्यांकन करने पर यह दृष्टिगोचर होता है कि कबीर का साहित्य आनेवाली अनेक पिढियों के लिए पथदर्शक का कार्य करने के साथ–साथ समाज, देश , या राष्ट्र की विकास यात्रा में भी वह अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रहा हैं।

21 वीं सदी में संत साहित्य की प्रासंगिकता पर विचार विमर्श करते समय महात्मा कबीर के साहित्य को अनदेखा नहीं किया जा सकता । म. कबीर के साहित्य की प्रासंगिकता पर लल्लनराय ने अपने विचार निम्न प्रकार प्रस्तुत किए हैं– ''प्रासंगिकता का संबंध किसी युग–विशेष की प्रगतिशील चेतना के साथ जुडा हुआ है, उस चेतना के साथ जो सामाजिक विकास के मार्ग को प्रशस्त करती है, उसे सही दिशा प्रदान करती है .... कबीर ने अपने साहित्य के माध्यम से अपनी प्रगतिगामी चेतना का परिचय देकर अपनी युगीन प्रासंगिकता सिद्‌ध की हैं ।''[1]

संस्कृति का आद्य ग्रंथ 'गीता' में एक उक्ति प्रसिद्‌ध है कि–''यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।/अभ्युथानद्ध र्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ।।/परित्राणाय साधुनां विनाशायच दृष्कृताम् ।/धर्म संस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे–युगे ।।[2] '

गीता' की यह उक्ति म. कबीर के लिए पूर्णतया सार्थक प्रतित होती हैं । अर्थात जब–जब धर्म की हानी होती हैं, अधर्म पराकाष्ठा पर पहुँचता है तब–तब ईश्वर इस धरती पर मानव के रूप में अवतरित होकर सृष्टि का संचालन करते हैं ।

जब देश में दुराचार, अत्याचार और विषमताओं का प्रकोप बढता है, सृष्टी का संतुलन बिगड जाता है तब कोई न कोई पुण्यात्मा, महात्मा अवतरित होकर डुबते हुए जनजीवन को संजीवनी प्रदान करते हैं । राम, कृष्ण, बुद्‌ध आदि ऐसेही महात्मा हुए थे । जिन्होंने सारे विश्व में अपनें क्रांतिकारी, विद्रोही विचारों की पताका लिए कार्य किया हैं ।

म. कबीर का साहित्य हिंदी साहित्य की महान उपलब्धि हैं। कबीर का साहित्य तत्कालीन समय की उपज हैं । तत्कालिन समय की माँग के हेतु ही मानों कबीर का जन्म हुआ था । अतीत के अनेक रचनाकारों का कृतित्व साहित्यिक तथा सांस्कृतिक संग्रहालय का मृत अंश मात्र बन गया है पर कबीर का साहित्य इस प्रकार का अप्रासंगिक और निष्प्राण साहित्य नहीं है, बल्कि वह प्रासंगिक साहित्य हैं ।

कबीर की अनेक साखियाँ और पद उसके प्रमाण हैं । मध्युगीन शक्ति साहित्य में कबीर का व्यक्तित्व विलक्षण तथा अनोखा रहा हैं । कबीर ने ऐसी ही विषम परिस्थितियों में जन्म लिया था जब समाज में विषमताएँ, विद्रुपताएँ, नैराश्य, अंधविश्वास, विध्वंस और नृशंसता ने चरमसीमा प्राप्त कर ली थी । समाज में

चारो ओर अंधविश्वास, अनाचार, दुराचार, जाति–पाँति, बाहयांडबरों का बोलबाला मचा था । धर्म के तथाकथित ठेकेदार मठाधिश बनकर जनता का शोषण कर रहे थे । आर्थिक संकट, सामाजिक विषमता से जनता त्रस्त हो चुकी थी । कबीर का भावुक मन समाज की इस विषम स्थिति को देखकर कैसे चुप रह सकता था ? कबीर का युग मुस्लिम शासकों का युग था ।

तत्कालीन समाज की सडीगली मान्यताओं पर कबीर ने जमकर प्रहार किया था । युगों युगों से शोषित, पीडित, दलित समाज के उद्धार का बीडा कबीर ने उठा लिया था । समाज की विषमता को नष्ट कर मानव–मानव के बीच समानता स्थापित करने का कार्य कबीर ने किया। इसलिए वे वास्तविक रूप से 'क्रांति के अग्रदूत' थे । म. कबीर एक सत्यान्वेषी, मानवतावादी, समताधिष्ठित मूल्यों की स्थापना करनेवाले, वैचारिक परिवर्तन की क्रांति लानेवाले, क्रांतिदृष्टा, सच्चे समाज सुधारक तथा धर्मसुधारक कवि थे। मनुष्य जाति के इतिहास में कबीर के समान दूसरा महात्मा नहीं हुआ ।

आज तक कबीर के सूत्रों का कोई मुकाबला नहीं कर सका हैं । इनके जैसे सरल, सीधे, स्पष्ट और साफ वचन पृथ्वी पर कभी नहीं कहे गए । कबीर के एक–एक वचन जैसे हजारों शास्त्रों के सार है । भारतीय जनमानस में संस्कृति के आद्य ग्रंथ 'गीता' का जो महत्व है वही महत्व कबीर के वचनों का हैं । इसे कोई सानी नही हैं ।

भारतीय संतों की परंपरा में कबीर का व्यक्तित्व अत्यंत विलक्षण रहा हैं । वे सीधे–साधे, अनपढ (निरक्षर) होते हुए भी साक्षर थे । उन्होंने स्वयम् अपनी निरक्षरता का प्रमाण देते हुए कहा हैं – **''मसि कागज छुयों नहिं, कलम गहयो नहिं हाथ ।''**[3] कबीर ने ज्ञान की पाठशाला में न पढकर अनुभव की पाठशाला से बहुत कुछ सीख लिया था । उनके समस्त वचन केवल विचार या सिद्धांत ही नहीं बल्कि अनुभव हैं । अनुभूति की सरल, सहज अभिव्यक्ति के वे पुरस्कर्ता थे । म. कबीर के काव्य के दो पक्ष हैं । 1) अध्यात्मिक तथा 2) समाज सुधारक रूप । वे एक मानवतावादी, प्रगतीशिल, लोकनायक तथा विद्राही कवि थे । उनका विद्रोही रूप एक सच्चे समाजसुधारक रूप में ही मुखर हुआ हैं । कबीर सही अर्थो में सच्चे मानवतावादी कवि थे । मनुष्य की समानता के वे पक्षधर थे ।

मनुष्य–मनुष्य के बीच की विषमता के विरोधी थे । केवल जन्म के आधार पर मनुष्य की श्रेष्ठता, अश्रेष्ठता इन्हें मान्य न थी । जातिप्रथा तथा वर्णाश्रम व्यवस्था पर जितनी चोट कबीर ने की है, उतनी मध्ययुग के किसी अन्य कवि न`नहीं की थी । जातियों, धर्मों, वर्गों आदि में विभाजित समाज की संकटग्रस्तता के समय कबीर का साहित्य प्रासंगिक हो जाता हैं ।

जाति तथा वर्णव्यवस्था पर कबीर ने निम्नप्रकार से विरोध प्रस्तुत किया हैं। जैसे :–''एक बूँद का मल मूतर एक चाम एक गूदा।/एक ज्योति से सब उपजा, कौन ब्राम्हण, कौन सूदा''[4] आज के इस वर्तमान समय में सांप्रदायिक तनाव दिन–ब–दिन बढता जा रहा हैं । सांप्रदायिक सद्भावना की जरूरत को देखते हुए कबीर और उनके साहित्य की प्रासंगिकता असंदिग्ध हैं । हिदू–मुस्लिम, हिदू–सिख आदि के बीच सांप्रदायिक विवाद आज भीषण रूप धारण करने लगा हैं ।

जिसके कारण देश की जनतांत्रिक व्यवस्था खतरें में आ गई हैं । हिंसा ने विराट रूप ले लिया हैं । ऐसे समय में कबीर के मानवतावादी विचार प्रासंगिक लगते हैं । मुस्लिम समाज की हिंसा पर उन्होंने विरोध दर्शाया हैं । यथा :–

''दिन भर रोजा रखत है, रात हनत है गाय।/यह तो खून वह बंदगी, कैसे खुसी खुदाय ।।'' [5]

म. कबीर ने मनुष्य के पुस्तकीय ज्ञान की उपेक्षा कर उस ज्ञान को महत्व दिया जो एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य के साथ जोडता हैं । जिससे प्रेम और मानवीयता की निर्मिती होती हैं । यथा :–

''पोथी पढि पढि जग मुआ, पंडित भया न कोइ।/ढाई आखर प्रेम का, पढै सो पंडित होइ ।।''[6]

म. कबीर ने हिंदू और मुस्लिम जातियों में मिथ्याचार, बाहयाचार, पूजापाठ, व्रत, उपासना, तीर्थाटन, छुआछूत, हिंसा, पाखंड आदि का खुलकर विरोध किया हैं । समाज में व्याप्त इन कुरीतियों को नष्ट कर परोपकार, सेवा, क्षमा, दान, धैर्य, अहिंसा आदि का अनुकरन जनता के लिए आवश्यक माना । व्यक्ति के अंतःकरण की शुद्धि को महत्व दिया । पशुवध तथा गोवध का उन्होंने प्रखर विरोध किया हैं । नैतिकता एवं सदाचार की प्रतिष्ठा को आवश्यक समझा । कबीर ने ही सर्वप्रथम मनुष्य में सदाचार और शुद्धाचरण के बीज बोए । उनका आँखन देखी पर विश्वास था कागज की लेखी पर नहीं । यथा –

''तू कहता कागज की लेखी मैं कहता आँखन देखी।''[7]

समता, मानवता, विश्वबंधुत्व, नैतिकता आदि का सही प्रमाण कबीर का साहित्य हैं । व्यक्ति के लिए अहंकार का परित्याग करने के लिए कहा । महात्मा गोस्वामी तुलसीदासजी की भाँति ही उच्चकोटी के समन्वयवाद की झाँकी कबीर के साहित्य में मिलती हैं । उनका समस्त साहित्य धर्म, समाज, आचरण, नैतिकता आदि का एक विशाल भंडार हैं ।

म. कबीर सच्चे अर्थो में शोषित, पीडित जनसमूह के मसीहा थे । उन्होंने अपने व्यक्तित्वं एवं कृतित्व के माध्यम से बहुसंख्य दलित, पीडित, शोषित जनता के संघर्ष का मार्ग प्रशस्त किया। उसे सही दिशा में अग्रेसर किया । यही कारण है कि दीन–दलितों के मसीहा डॉ. आंबेडकर जैसे महान प्रतिभाशाली जननेता ने भी उनके क्रांतिकारी व्यक्तित्व से प्रभावित होकर उन्हें अपना गुरू मान लिया था । सही अर्थो में यहीं कबीर और उनके साहित्य की प्रासंगिकता सिद्ध हो जाती हैं । आज के इस आधुनिक संदर्भ में 'सर्वधर्म समभाव' के सिद्धांत को स्वीकारने की आवश्यकता हैं । धर्मांधता के कारण कर्मकांड तथा बाहयाचारों में वृद्धि हो रही हैं । कबीर ने इस स्थिति से जूझते हुए कर्मकांड तथा बाहयाचारों का विरोध किया हैं । धर्म के सही रूप को

हमारे सामने प्रस्तुत किया हैं । मुस्लिम धर्म की रोजा पढने की पद्धति का कबीर ने विरोध किया हैं । यथा –

''कांकर पाथर जोरि कै, मस्जिद लई बनाय।/ता चढि मुल्ला बाँग दै, क्या बहरा हुआ खुदाय ।।''[8]

मुस्लिम संप्रदाय में जोर जोर से अल्लाह को पुकारने की जो पद्धत है, उसका उन्होने उर्पयुक्त पंक्तियों के द्वारा विरोधा किया हैं । म. कबीर एक सच्चे मानवतावादी कवि थे । उनका समस्त साहित्य मानवीयता का परिचायक हैं । कबीर ने मनुष्य–मनुष्य के बीच मानवियता के दृष्टिकोण को आवश्यक समझा था । जो कार्य 12 वीं सदीं में आद्य समाजसुधारक, मानवता के पक्षधर म. बसवेश्वर ने किया था उसी परंपरा को आगे म. कबीर ने बढाया था ।

म. बसवेश्वर की ही भाँति कबीर ने भी स्त्री–पुरूष समानता का विचार प्रस्तुत किया । मानवीयता का एक अन्य दृष्टिकोण नारी को मानवी रूप में स्वीकार करना हैं । भलेही कबीर के साहित्य में नारी निंदा के दर्शन होते हों फिर भी वह नारी–निंदा नारी के भोग्या रूप को ही अभिव्यक्त करती हैं । डॉ. राधा गिरधारी ने लिखा है –

''नारी के प्रति कबीर का समतावादी दृष्टिकोण कबीर के उदार एवं विशाल विचारों कों व्यक्त करता हैं । उन्होंने नारी–पुरूष में कोई भेद नहीं किया । उसे समाज की इकाई के रूप में स्वीकार करते हुए समतुल्य माना । कबीर सही अर्थो में लोकनायक थे, युगदृष्टा थे ।''[9]

म. कबीर मूलतः पहले भक्त तथा संत थे बाद में कवि । कबीरदास की भक्ति साधना का केंद्रबिंदु प्रेमतत्व हैं । प्रेम का जो स्वरूप कबीरदास ने प्रस्तुत किया है वह बहुत व्यापक और विशाल हैं । जीसस ने भी कहा है कि, 'प्रेम ही परमात्मा ' हैं । प्रेम की साधना अत्यंत कठीन है पर असंभव नहीं ।

कबीर की भक्ति की मौलिक देन यही है कि वह एकान्तिक से लोकसंग्राहात्मक होती हैं । वह व्यक्ति के अंदर के अहंकार को गिरा देती हैं । सदाचरण तथा सहज जीवन से निष्काम कर्म की प्रेरणा देती हैं ।

उसमें विधी–विधान, पूजापाठ, पाखंड, आडंबर का कोई स्थान नहीं हैं । वह निर्गुण भावभक्ति हैं । इस भक्ति का द्वार सभी के लिए खुला था । फिर यहाँ वर्ण–अवर्ण का भेद कैसा ? इन सबका मूलतत्व एक ही है वह है प्रेमतत्व ।

इस प्रकार अंतः यह स्पष्ट है कि, 14 वीं सदीं में कबीर द्वारा समाज की समग्र सामाजिक विसंगतियों पर किया गया प्रहार संपूर्ण मानव जाति की एकता तथा उसकी समानता का संदेश एवंम् मानवीयता का विचार आदि सबकुछ आज के इस आधुनिक समय में भी प्रासंगिक हैं ।

निसंदेह म. कबीर का साहित्य आनेवाली अनेक पिढियों के लिए पथदर्शक तथा प्रेरणादायी सिद्ध हो रहा हैं । इसमें कोई संदेह नहीं की उनका साहित्य हिंदी साहित्य संसार की अमूल्य निधि हैं ।

संदर्भ ग्रंथ

1) (संपा.) डॉ. वासुदेव सिंह –आधुनिक संदर्भ में कबीर की प्रासंगिकता–लल्लनराय – पृ. 251, 252 2) उदय कुमठेकर – श्रीमद्भगवतगीता – शंकर भाष्य भावानुवाद – प्रस्तावना – पृ. 3 3) समन्वयक – डॉ. अमर प्रसाद जायस्वाल – काव्य सरिता – पृ. 21 4) (संपा.) डॉ. श्यामसुंदर दास –कबीर ग्रंथावली – पृ. 31 5) इंद्रप्रस्थ भारती – कबीर विशेषांक – अप्रैल–जुन 2000 – पृ. 30 6) (संपा.) डॉ. श्यामसुंदर दास –कबीर ग्रंथावली – पृ. 30 7) समन्वयक – डॉ. अमर प्रसाद जायस्वाल – काव्य सरिता – पृ. 22 8) (संपा.) डॉ. श्यामसुंदर दास –कबीर ग्रंथावली – पृ. 64 9) डॉ. राधा गिरधारी – सृजन के विविध आयाम – पृ. 63